ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 208-210

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

विकास एवं राष्ट्रीय सामाजिक एकता

विनोद कुमार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर– नेट उत्तीर्ण, समाजशास्त्र, मेजर शिव दयाल सिंह महाविद्यालय
फरूखाबाद (उ0प्र0), भारत

Received- 04.08.2020, Revised- 09.08.2020, Accepted - 11.08.2020 E-mail: - dr.ramanyadav@gmail.com

सारांश : ***स्वाधीनता के बाद देष के कर्णधारों के सम्मुख सबसे प्रमुख प्रष्न देष में विद्यमान अशिक्षा, अज्ञानता, निर्धनता, बेरोजगारी, ऋणग्रस्तता, बीमारियों और अस्पृश्यता जैसी समस्याओं से निजात पाकर देश को समतावादी समाज की ओर अग्रसर कर विकास करने का था।***

कुंजीभूत शब्द– कोरोना, विश्व स्वास्थ्य संगठन, वायरस, ट्रेडोस एधानोम गेब्रेयेसुस, डिसीज, विषाणु ।

तत्कालीन समय में देष के सम्मुख विकास के दो प्रमुख मॉडल थे। प्रथम गांधीवादी मॉड था जिसमें कृषि, लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास, आत्मनिर्भरता तथा राजनीतिक शक्ति को ग्राम की बुनियादी इकाई ग्राम पंचायत तक विकेन्द्रीयकृत करके परंपरावादी समाज में आवश्यक सुधार कर आधुनिक बनाना था। दूसरा नेहरूवादी मॉडल था जिसमें भारी उद्योगों की स्थापना, सार्वजनिक क्षेत्र की शक्तिशाली भूमिका, आधुनिकतम तकनीकों और प्रणालियों पर बल और आयोजन विकास पद्धति को अपनाना था। देष के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के मस्तिष्क में तीव्र विकास, सोवियत यूनियन और अन्य विकासषील देशों का उदाहरण था। परिणामस्वरूप देश में नेहरूवादी मॉडल को अपनाया गया। शक्तिशाली आयोजन आयोग की स्थापना करके विकास के लिए समयबद्ध योजनाएं प्रारंभ की गई। सार्वजनिक क्षेत्र में वृहद् उद्योगों की स्थापना हुई। आर्थिक विकास में निजी क्षेत्र को महत्व प्रदान कर देश मिश्रित अर्थ–व्यवस्था के मार्ग पर आगे बढ़ा।

किन्तु आयोजित विकास की अनेक योजनाओं के बाद अपेक्षित संरचनात्मक बदलाव नहीं आया है, समस्याओं पर भी विजय प्राप्त नहीं की जा सकी है। निर्धनता और बेरोजगारी की समस्याएं पहले की अपेक्षा और जटिल हो गई हैं। पर्यावरण, प्रदूषण, मुद्रास्फीति, घाटे में चल रहे सार्वजनिक उद्यम, कुटीर उद्योगों का ह्रास, विदेषी ऋण, अन्तर्राष्ट्रीय विदेशी कंपनियों का देश में प्रवेश जनजीवन को दिशाहीन किया है। बल्कि यह भी प्रमाणित किया है कि आर्थिक विकास मात्र से सामाजिक विकास नहीं हो सकता। जनसामान्य की प्रत्याशाओं में हुई वृद्धि, सैद्धान्तिक नियोजन, लक्ष्य और साधनों की भांति, कृशि के प्रति अव्यवहारिक दृष्टिकोण, औद्योगीकरण के दुष्परिणाम, दोशपूर्ण वितरण प्रणाली, मुद्राप्रसार, नौकरशाही की भूमिका और जनजीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार के संदर्भ में विकास का सामाजिक मूल्यांकन आज की महती आवश्यकता है।

इसी प्रकार नई आर्थिक उपलब्धियों, उत्पादन की तकनीक, कृशि की हरितक्रान्ति और खाद्यान्न की आत्मनिर्भरता, बन्द सामाजिक संरचना के स्थान पर मुक्त सामाजिक संरचना की ओर गत्यात्मकता व्यक्ति के परिश्रम कार्य एवं उपलब्धियों को मान्यता, अनुसूचित जातियों, जनजातियों, पिछड़े वर्गों को संरक्षण, स्त्रियों की उन्नति, षोशण से मुक्ति, परिवार विवाह और शोषण के विरूद्ध लाए गए सामाजिक विधानों का भी समतावादी समाज की स्थापना और विकास हेतु सकारात्मक मूल्यांकन करना होगा।

निश्चय ही एक राश्ट्र राज्य के रूप में भारत की पिछले वर्शों की भौतिक उपलब्धियॉ कम नहीं आंकी जा सकती। औद्योगिकीकरण की दशा में तो प्रगति हुई ही, कृशि में हरितक्रान्ति संभव हुई प्रतिरक्षा में भी हम काफी कुछ संभले हैं। शिक्षा और आधुनिक ज्ञान–विज्ञान की दीक्षा का भी जहां तक प्रश्न है, हमारे पढ़े–लिखे लोग सारी दुनिया में फैले हुए हैं।

समसामायिक परिस्थिति में बिना राज्य सत्ता के नेतृत्व और सहयोग के न तो सामाजिक विषमताएं मिटाई जा सकती हैं, न योजनापूर्वक आर्थिक विकास ही संभव है, सिर्फ कानून बनाकर समाज को रूपांतरित नहीं किया जा सकता। पूरे जन समुदाय को अनुप्रमाणित करने वाली ज्वलन्त राष्ट्रीय भावना के अभाव में कोई लक्ष्य दूरगामी और स्थायी परिणाम उपजाने वाले सिद्ध नहीं हो सकते। आज हमारे यहां राजनीति का संबंध ही मानों उलट गया है। शिक्षा भी देशवासियों में वसांस्कृतिक आत्मविश्वास उपजाने में सर्वथा अक्षम है। स्वयं स्वाधीनता संग्राम के दौर में जो समझौते किए गए, वे भी उल्टे ही परिणाम उपजा रहे हैं। एकता के बदले अराजकता–बिखराज हो रहा है। उदाहरणार्थ नहीं हुआ न भाशावार प्रांत बना देने से राष्ट्रीय एकता को कोई बल मिला। उल्टे, केन्द्राप्सारी प्रवृत्तियां ही

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

पनपी, प्रांतीयता उपराष्ट्रीयता की भावनाएं मजबूत हुई हैं। सन् 1947 में भारत का विभाजन दो राष्ट्रों में नहीं दो राज्यों में हुआ, विभाजन से पूर्व जिस आधार पर राष्ट्र एक था, वह आधार क्या विभाजन के बाद नहीं रहा? क्या नेहरू, क्या गांधी, क्या विवेकानन्द, क्या श्री अरविन्द सभी ने जो एक स्वर में उत्तर–दक्षिण, पूर्व–पश्चिम समूचे भारत के जनमानस को एक देखा, अनुभाव किया अपनी आखों से साक्षात् किया वह क्या भ्राम या खुशफहमी थी? समस्त भारतीयों के अंदर निकलने वाली एकता क्या ऐतिहासिक विवरणों से पुष्ट नहीं होती? समूची ऐतिहासिक परम्परा में अभिव्यक्त यह भावनात्मक एकता ही क्या भारत की राष्ट्रीय एकता नहीं?

राष्ट्रीय एकता को परिभाषित करते हुए आहूजा ने लिखा है, "राष्ट्रीयता एकता वह प्रक्रिया है जिसमें समानता की चेतना का समावेष होता है तथा जिसमें एक देश के विभिन्न समूह तथा उप–समूह अनेक रचनात्मक प्रयासों द्वारा एक सामान्य लक्ष्य को पाने एवं एकता, तादीत्मीकरण और सहयोग में अधिकतम वृद्धि करने का प्रयत्न करते हैं।

भावनात्मक एकता समिति ने इस संबंध में लिखा है कि राष्ट्रीय एकता का तात्पर्य एक ऐसे मानसिक दृष्टिकोण का निर्माण करना है जो सभी व्यक्तियों को इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वे समूह की अपेक्षा अपने देश के प्रति अधिक निष्ठा रखें तथा दलीय स्वार्थों की अपेक्षा देश के कल्याण को सर्वोच्च महत्व दें। आचार्य विनोबा भावे का राष्ट्रीय एकता के बारे में मानना है कि "यह भावात्मक एकता, भाईचारे और राश्ट्र–प्रेम की वह दृढ़ भावना है जो एक देश के सभी निवासियों को अपनी व्यक्तिगत, क्षेत्रीय, धार्मिक एवं भाषाई भिन्नताओं को भुलाने में सहायता देती है।

स्पष्ट है कि एकता में जाति, धर्म एवं सम्प्रदाय से ऊपर उठकर लोग आपस में एक रहते हैं। उनके लिए व्यक्तिगत एवं सामाजिक हितों से ऊपर राष्ट्र हित होता है। अक्सर हम इस बात पर गर्व करते हैं कि हमने राजनीतिक एकता कायम कर ली है लेकिन एक बड़ा सवाल यह है कि क्या हम सामाजिक रूप से एक हुए हैं?

राष्ट्रीय और सामाजिक एकता से जुड़े हुए हमारे सवाल भारत के अतीत और गौरवशाली परंपरा से जुड़े प्राचीन समय के सवाल नहीं है, बल्कि यह सवाल 2020 के दश के के और 21वीं षताब्दी से जुड़े हुए सवाल हैं। इस संबंध में पंडित जवाहर लाल नेहरू का यह कथन अर्थ रखता है कि "मैं भारत की एक पर जोर देता हूँ। लेकिन मेरा मतलब सिर्फ राजनीतिक एकता नहीं है, जो हम पहले ही प्राप्त कर चुके हैं। मेरा जोर तो भावनात्मक एकता पर है, ऐसी एकता जिसमें लोग दिलों दिमाग से जुड़े रहें और अलगाव की भावना ही समाप्त हो जाए" पंडित नेहरू के इस विचार को यदि आधार बिन्दु मानकर चला जाए तो स्वतः स्पश्ट हो जाता है कि जाति, धर्म, भाषा, राजनीतिक एवं आर्थिक प्रतिस्पर्धा से जुड़े प्रश्न आज की परिस्थिति के अनुरूप भावनात्मक एकता की मांग करते हैं। इनके उत्तर वेदों, पुराणों, महापुरूशों के कथनों और उनके तत्कालीन प्ररणादायी कृत्यों में नहीं खोजे जा सकते। आज देश और धर्म सामुदायिकता के दो आयामों के रूप में हैं, धर्म संस्कृति के संदर्भ में तो देष राजनीति के धर्म अतीत है तो देश भविष्य। देश में धार्मिक आन्दोलनों ने भारतीयों को भारत की महानता और गौरव को समझाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किन्तु धर्म की अतीत की व्याख्या देश के वर्तमान और भविष्य का आधार नहीं बन सकती। यदि विवेकानन्द की धर्म की व्याख्या और परिभाषा महात्मा गांधी के काम नहीं आ ई तो वह आज 21वें शताब्दी के काम कैसे आ सहमी है। स्वामी विवेकानन्द ने सोचाा था कि वे वेदान्त से अंग्रेजों और ईसाईयत को मुंहतोड़ जवाब दे सकेंगे। उन्होंने रामकृष्ण मिशन की भी स्थापना की लेकिन विवेकानन्द की व्याख्या के अनुरूप न तो बदली हुई परिस्थिति में रामकृष्ण मिशन ही कुछ कर पाया और न ही विवेकानन्द जी की व्याख्या राष्ट्र की धुरी बन पा रही है। पाकिस्तान में एक किताब एक धर्म का क्या हुआ? अतः धर्म धारण कर्तव्य है, तब तो ठीक है लेकिन इसमें सामाजिक एकता या संगठन बनेगा दिवास्वप्न ही है।

इसी प्रकार जाति, भाषा, क्षेत्र के मुद्दे राष्ट्रीय एकीकरण और देश के सुनहरे भविष्य और सामाजिक एकता के मुद्दे नहीं हो सकते। राजनेताओं, समाज सुधारकों, एन0जी0ओ0 सभी को ध्यान रखना चाहिए कि भारतीय संस्कृतिक की विशेषता विविधता में एकता की रही है। इतिहास में यदि किन्हीं कारणों से इसके साथ खिलवाड़ की गई है तो उसे आज न तो प्रमाणिक माना जा सकता है और न ही यह 21वीं शताब्दी के अनुरूप हैं। नियोजन और विकास आज की आवश्यकता है। इससे ही सामाजिक न्याय मिलेगा तथा समावाद की स्थापना होगी। जाति और धर्म के संकूचित मुद्दे बिखराव उत्पन्न कर राष्ट्रीय विकास के मार्ग को अवरूद्ध करते हैं। विभेदीकरण ने लोगों के मन मस्तिष्क को दूषित कर गरीबी अमीरी की खाई और तनाव तथा साम्प्रादियकता को बढ़ाता हैं इससे राज्य का अवमूल्यन हो रहा है तथा वैधता का स्तर नीचे जा रहा है साथ ही संविधान, कार्यपालिका, न्यायपालिका का स्तर भी प्रभावित हो रहा है।

आज भ्रष्टाचार की समस्या आर्थिक और सामाजिक

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

असमानता के उत्तरदायी है। आए दिन भाई–भतीजावाद और रिश्वतखोरी के आरोपों के समाचार सुनने को मिलते हैं। राजनेता, अधिकारी, कर्मचारी, व्यवसायी सभी वर्गों में भ्रष्टचार बढ़ा है। इस समस्या के लिए सूचना के अधिकार सहित भ्रष्टाचार निरोधी जितने भी प्रयत्न किए गए हैं वे अपर्याप्त सिद्ध हो रहे हैं। समाजसेवी संगठनों, मीडिया में देश, समाज और संविधान की समीओं को लांघ कर की जाने वाली चर्चाएं यहां तक कि आन्दोलनात्मक गतिविधियां चलाकर अपने–अपने संकुचित स्वाथ के लिए अथवा वोट प्राप्ति की राजनीति के प्रयासों से बहुमत के लिए जो कुछ किया गया उससे तो पारस्परिक मतभेद, तनाव और संघर्षात्मक परिस्थितियों को ही बढ़ावा मिला ऐसे प्रयास न तो राश्ट्र के हित में है और न ही समाज के।

हमें राष्ट्र व समाज के हित को सर्वोपरि मानकर वोट प्राप्ति की संकीर्ण राजनीति और धर्म जाति और भाषा से संबंधित संकीर्ण निश्ठाओं को त्यागकर इनमें ऐसा समन्वय स्थापित करने पर विचार करना चाहिए कि आज की परिस्थिति के अनुरूप इनकी व्याख्या नियोजन और विकास के अनुरूप हो। नियोजन जनतंत्रीकरण, स्वदेदेशी और आधुनिकीकरण आज की आवश्यकता है। इनसे विमुख रहकर राजनीतिक और सामाजिक एकता स्थापित नहीं की जा सकती।

विकास, राश्ट्र और समाज की एकता के लिए विचारणीय कुछ तथ्य–

1. विकास और राष्ट्र निर्माण की आर्थिक संस्थाओं से ध्यान न हटाया जाए और न हीं जाति, धर्म, क्षेत्र परम्परा, भाषा, संबंधी इतिहास की खिचड़ी के कंकड़ निकालें जाएं। इनकी नई–नई व्याख्याएं करके लोगों को भ्रामित करने के प्रयासों पर प्रतिबन्ध हों।
2. लोगों को राजनीतिक सहभागिता और राजनीतिक समाजीकरण के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित किया जाए, इसका ध्यान रखा जाए कि अल्पसंख्यक, बहुसंख्यक, पिछड़े, उत्तर, दक्षिण की धारणाएं राजनीतिक सहभागिता और समाजीकरण के आधार नहीं हो सकते। ऐसा सामाजिक एकता के मूल सिद्धान्तों की कीमत पर कदापि न किया जाए।
3. देश में राष्ट्रीयता एकता परिषद, अखिल भारतीय साम्प्रदायिकता विरोधी समिति, राष्ट्रीय एकता कार्य दलों को पुर्नस्थापित कर इन्हें क्रियाशील बनाए जाने की आवश्यकता है।
4. विधायिका, कार्यपालिका तथा जनप्रतिनिधियों को राष्ट्र निर्माण, राजनीतिक विकास और राजनीतिक आधुनिकीकरण एवं सामाजिक एकता के प्रति अधिक उत्तरदायी बनाए जाने का संवैधानिक संशोधन किया जाए।
5. ग्रामीण जनता के सामाजिक और राजनीतिक स्तर को ऊंचा करने के लिए औद्योगीकरण और सामुदायिक विकास की प्रभावी नीति बनाई जाए।
6. शिक्षा के पाठ्यक्रम को इस प्रकार से बनाया जाना चाहिए कि इसके माध्यम से राश्ट्र के प्रति निष्ठा, प्रतिबद्धता और समर्पण का भाव तथा सामाजिक एकता को प्रोत्साहन मिले।
7. राजनीतिक दलों को दलगत राजनीति, संकुचित उद्देश्यों और विरोध के लिए विरोध की नीति को त्यागकर राष्ट्र निर्माण और सामाजिक एकता एवं विकास के मुद्दों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।
8. संविधान, विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका जैसी संस्थाओं लोकसभा, राज्य विधान सभा के अध्यक्षों, राज्यपालों, मुख्यमंत्रियों के पदों का अवमूल्यन नहीं होना चाहिए।
9. सामुदायिक जीवन में बाजार, राज्य और इतिहास में गतिशील समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न कर लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोणा और नई समझ विकसित करने की चेष्टा की जाए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. raviwar.com/III/662, India Celebration Re public day Block all Raviwar.comresult/ rameshchandrasharma.raviwar.com google
2. वही
3. वही
4. पाण्डेय गणेश, भारतीय सामाजिक समस्याएं, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0 312
5. वही
6. वही
7. वही
8. 'धर्म निरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता', विज्ञापन एवं दृश्य प्रचार निदेशालय सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ02
9. महाजन धर्मवीर, राजनीतिक समाजशास्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1983, पृ0 268
10. वेगड अमृतलाल, बापू की कहानी मकर रेखा की जुबानी, रचना अंक 92, अक्टूबर 2011 म0प्र0 शासन उच्च शिक्षा विभाग एवं हिन्दी ग्रन्थ अकादमी का समवेत उपक्रम, पृ0 65।

*****

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*